Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

'कालिदास के साहित्य जगत में पर्यावरण का महत्त्व'

प्रा.डो. भावनाबहन जे. चांपानेरी*

हमारे वैदिक ग्रंथो में हजारों वर्ष पूर्व ही यह लिखा गया है कि "रक्षयै प्रकृतिं पातुलोकाः"। लोक की रक्षा के लिए प्रकृति की रक्षा करो । यानी धरती पर मानव का अस्तित्व बचा रहे इसके लिए पर्यावरण की रक्षा बहुत जरूरी है ।

शिला भूमिरश्मा पासुःसा भूमिः संधृता धृता ।
तस्यै हिरण्यवक्षसे पृथिव्या अकरं नमः ॥....
ये ग्रामा यदरण्यं याः सभाः अधि भूम्याम् ।
ये संग्रामाः समितयस्तेषु चारु वदेम ते ॥ (अथर्ववेद, भूमिसूक्त)

अथर्ववेद का भूमिसूक्त संसार साहित्य में देशभक्ति मातृभूमि पूजन इत्यादि का प्रथम पर्यावरण काव्य है। जो ग्राम, सभा, समिति इत्यादि के साथ वन देवता के भी चारुकथन का उदात्त एवं भव्य मानवीकरण प्रस्तुत करता है। "माता भूमिः पुत्रोडहं पृथिव्या" गाने वाले दूरदर्शी वैदिक ऋषियों ने गम्भीर चिंतन के बाद जो मानव जीवन का दर्शन हमें दिया है, उस में सभी तत्त्वों में देव, बुद्धि और चराचर में ईश्वर दृष्टि रखने की प्रेरणा है। हमारें यहाँ भूमि, पर्वत, नदी, वन, वृक्ष इत्यादि प्रकृति के तत्त्वों को देवता मानकर उनकी पूजा की जाती है।

आज जब पर्यावरण की संरक्षण ओर संवर्धन की समस्या सताती है तो साहित्य को हम नजर अंदाज नहि कर सकते है। साहित्यकारो ने हमे पर्यावरण के साथ केसे नीरोगी रह सकते है इसका सांगो पांग विवरण बताया है।

संस्कृत के मूर्धन्य कवि कुलगुरु कालिदास के साहित्य जगत से पर्यावरण की सुरक्षा और ऋषियों के उपदेश का पालन किस प्रकार से करना है यह वाचक को अवश्य प्राप्त होता है। कवि ने संस्कृति, वर्णव्यवस्था, आश्रमव्यवस्था, संस्कार, विवाह का उद्देश्य, गृहस्थजीवन, खान-पान, वेशभूषा, सामाजिक जीवन, रीति-रिवाज तथा आचार व्यवहार, ललित कला, शिक्षा, दर्शन तथा धर्म इत्यादि विषयों की चर्चा की है। उनके लेखनकला में जड-चेतन सब में एकात्मकता, पारस्परिक सहानुभूति एवं समरसता तथा सब का व्यापक जनहित में पारस्परिक कल्याण में उपयोग हो, किसी का दुरूपयोग न हो और न कोई अपने स्वार्थ की भावना से किसी वस्तु का उपयोग करे, यह बताना ही कवि का उदेश्य है।

प्रा.डो. भावनाबहन जे. चांपानेरी, संस्कृत विभागाध्यक्षा ,एम. टी. बी. आर्ट्स कालेज, सूरत.

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

भावना से किसी वस्तु का उपयोग करे, यह बताना ही कवि का उदेश्य है।

व्यक्ति के व्यक्तित्व की पहचान किसी का जीवन बचाने और जीवनदान देने में है। रधुवंश महाकाव्य में दिलीप और सिंह के संवाद से कवि ने आत्मोत्सर्ग की पराकाष्ठा और संस्कृति के जतन की तथा धर्म की रक्षा की है। दिलीप कहता है - "क्षत्रिय वह है, जो अपने उदग्रबाहु बल से पीडित प्राणियों का परित्राण करे" क्षतात्किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्त्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः ।[१] अपने श्स्त्र बल से जब वह भूखे सिंह के पंजो में छटपटाती कातर नेत्रों से निहारती नंदिनी धेनु को नहीं छुडा पाता तो यह कहते हुए कि- " भाई सिंह, तुम्हें अपनी भूख ही तो मिटानी है न ? तो लो, मेरा यह शरीर ले लो, नंदिनी को छोड दो और इसे खाकर अपनी भूख मिटा लो" स त्वं मदीयेन शरीरवृत्ति देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद।[२] अपने शरीर को ही मांस के लोथडे कि तरह भूखे सिंह के आगे डाल देता है। स न्यस्तशस्त्रो हरये स्वदेहमुपानयत्पिण्डमिवामिषस्य ।[३]

कवि की आश्रमव्यवस्था की ओर देखे तो - राजा दुष्यन्त जब आश्रम मृग के पीछा करते हुए कण्व ऋषि के तपोवन में पहोंचते है। तब मुनि राजा को रोकते हुये कहते है कि- राजन् , आश्रममृगोडयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः ।[४] राजा को उस के कर्तव्य का स्मरण करवाया कि उनकाशस्त्र तो पीडितो की रक्षा के लिए है, हरिण जेसे भोले भाले निरपराध वन्य प्राणियों पर प्रहार करने के लिए नहीं । "आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहुर्तमनागसि ।[५]

कालिदास के पास एक vision प्रकृति के बारे में था । वह जानते थे कि प्रकृति में एक विलक्षण अभियोजन क्षमता है। सभी का अस्तित्व एक दूसरे पर निर्भर है। जेसे कि तितलियों और मधुमक्खियों का अस्तित्व फूल पौधें पर निर्भर है और फूल पौधें का भविष्य उनके द्वारा संरक्षित है। मधुमक्खियों द्वारा निर्मित मधु मनुष्य के स्वास्थ्य का वर्धक है । मनुष्य प्रकृति की गोद में बैठकर ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा लेता रहा है। चिडियों ने हमें उडना सिखाया, रंग-विरंगे पंख वाले मोरों ने हमें शान-शौकत सखाया, कोकिल ने संगीत सिखाया, शेरो ने रण-कौशल सिखाया, पशुओं ने अमृत सदृश दूध पिलाया और वनस्पतियों एवं पेड पौधें ने अन्न, औषधि और फल खिलाकर जीवन-दान दिया है। ये सारी समज कवि ने अपने साहित्य में स्थान-स्थान पर की है।

अभिज्ञान शाकुन्तल में वृक्ष तथा लताओं के साथ जो पारिवारिक स्नेह संबंधो का विकास भव्य और हृदयस्पर्शी है। शकुन्तला पौधें को घडों से पानी सींच रही है तब सखि कहती है कि शकुन्तले , लगता है कि तात कण्व को ये आश्रम वृक्ष तुमसे भी प्रिय है इसी

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

लिए तो नव मालिका के पुष्पों से भी कोमल तुम को उन्होनें इन पौधें को सींचने के कठिन कार्य में लगा रखा है। किन्तु शकुन्तला को तो इन वृक्षों से अपने सगे भाईयों जैसा स्नेह है अतः उन्हें सींचने में उसे कष्ट कैसा, उसे तो सुखानुभूति ही होती है। अपनी सखि अनसूया से कहती है - न केवलं ततनियोगः एव । अस्ति मे सहोदरस्नेहः एतेषु ।[६]

कुमारसंभव में पार्वती तो अपने हाथों से रोपे गए पौधें का घटरूपी स्तनों से पुत्रवत् संवर्धन करती हैं। आगे चलकर औरस पुत्र कार्तिकेय भी पादपों के प्रति उनके वात्सल्य को कम न कर पाए । रघुवंश में तपस्वी कन्यायें इन वृक्षों को प्रतिदिन सींचा करती थी। वृक्षों की जडो के चारों और थांवले रहते थे, जिन में पानी भरा रहता था । आश्रम के पक्षिगण इनमें से जल पीकर अपनी प्यास बुझाया करते थे । (रघु. १-५१) कवि ने स्थान-स्थान पर पर्णकुटी,[७] बीच-बीच में लतागृह,[८] कुंज[९] आदि जिन में पत्थर की शिलायें भी विश्रामार्थ पडी रहती थी, न केवल सौन्दर्य को बढाती थी, किन्तु तपती दोपहरी में शान्ति भी देती थी । भूमि सुरक्षा के बारे में कवि लिखते है कि - दूर से ही चिडियों के धोसलों से गिरा नीवार, इंगुडी के बीजों को तोडने वाले पत्थर विश्वासपूर्ण निर्भयता के साथ घूमते हुए मृग तथा वल्कल के टपके हुए जल-बिन्दुओं की रेखा को देखकर निश्चय हो जाता था तपोवन पास ही है। (अभिज्ञान.१/१४)[१०] कवि भास ने भी स्वप्नवासदत्तम् में यौगन्धराय कंचुकीय और ब्रह्मचारी के पात्र से तपोभूमि के पवित्र वातावरण की बात की है।

मेधदूत से जल ही जीवन है विवेचन करने पर ये संदेश हम पाते है कि मां स्तनपान कराकर अपने शिशु को पोषण करती है तो धरती माता का स्तन जलद जलसृष्टि करके वनस्पतियों को नव-जीवन देता है। प्राणियों के लिए घास और मनुष्यों के लिए अन्न उत्पन्न करता है। इसीलिए कल्लोल करती नदिर्यां उसके जिवन का जयघोष करने लगती हैं।

कई स्थानो पर वस्त्रो के स्थान वल्कल धारण करने का उल्लेख है। शकुन्तला, सीता आदि ने तपोवन में वल्कल का ही प्रयोग किया था ।(रघु.१५/८२, अभि. १/१६, १/१४, ६/१७) राम ने वन जाते समय मांगलिक वस्त्रों का परित्याग कर वल्कल ही पहन लिए थे।(रघु. १२/८) कुमारसंभव में पार्वती भी रेशमी वस्त्रों को उतार कर वल्कल वस्त्र पहन लेती है। अभिज्ञान शाकुन्तल में शकुन्तला जब विदा होती है तब किसी वृक्ष ने उसे पहनने के लिए रेशमी वस्त्र दिए हैं किसी ने चरण रंगने के लिए महावर दिया है तो अन्य पादपों ने वन देवता के हाथों से अलंकरण के लिए दिव्य आभूषणों के उपहार दिए हैं।(अभिज्ञान शाकुन्तल ४/५)[११] ऋतुसंहार में ऋतु अनुसार फूलों के चयन का भी स्पष्ट वर्णन है। किस प्रकार स्त्रिर्यां प्रत्येक ऋतु में खिलने वाले पुष्पों से अपना शृंगार किया करती थी । इस से सिद्ध होता है कि वृक्षों की मानव-जीवन में महिमा एवं उपयोगिता निर्विवाद है। उनकी अहिंसा वृत्ति और

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

विश्वबन्धुत्व की भावना उनके इस सहज स्वाभाविक नैसर्गिक सौन्दर्य का रहस्य कहने पर कोई अतिशयोक्ति नही हैं ।

संदर्भ सूचि :

(१) रधुवंश २-५३
(२) रधुवंश २-४५
(३) रधुवंश २-५९
(४) अभिज्ञानशाकुन्तलम् पृष्ठ- ६
(५) अभिज्ञानशाकुन्तलम् अंक१ श्लो.११
(६) अभिज्ञानशाकुन्तलम् पृष्ठ- १०
(७) शकुन्तले, गच्छोटजम् । फलमिश्रमर्धमुपहर।
(८) अस्मिन् वेतसपरिक्षिप्ते लतामंडपे संनिहितया तया भवितव्यम् ।
(९) एषा मे मनोरथप्रियतमा सुकुमास्तरणं शिलापट्टमधिशयाना सखीभ्यामन्वास्यते ।
(१०) नीवाराः शुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामधः
प्रस्निग्धाः क्वचिदिङ्गुदीफलभिदः सूच्यन्त एवोपलाः ।
विश्वासोपगमादभिन्नगतयः शब्दं सहन्ते मृगा
स्तोयाधारपथाश्व वल्कलशिखानिष्यन्दरेखांकिताः ॥
अभिज्ञान. अंक-१ श्लो.१४
(११) क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरुणा मांगल्यमाविष्कृतं
निष्ठयूतश्चरणोपभोगसुलभो लाक्षारसः केनचित् ।
अन्येभ्यो वनदेवताकरतलैरापर्वभागोत्थितै-
र्दत्तान्याभरणानि नः किसलयोद्भेदप्रतिद्वन्द्विभिः॥
अंक ४,श्लो.५